(समयसार) गाथा ३२० जयसेनाचार्य की टीका। अधिकार जरा सूक्ष्म परम रहस्यमय था। रहस्यमय था। तुम्हारे में क्या कहते हैं? थोड़ा सूक्ष्म है परन्तु सुने तो सही, क्या चीज़ है? वास्तविक बारह अंग और सिद्धान्त का सार यह है कि ज्ञायक चिदानन्द अपना आत्मा ध्रुव परमपारिणामिकभाव तत्त्व लक्षण के सन्मुख होकर श्रद्धा-ज्ञान करना, वह सम्पूर्ण बारह अंग का सार है। इसकी सब फिर टीकायें और विस्तार है। समझ में आया?

देखो! अपने यहाँ आये, **विवक्षित-एकदेशशुद्धनयाश्रित यह भावना...** कौन सी भावना? जो चैतन्यस्वरूप ज्ञायकभाव, उस ओर की एकाग्रता, ऐसी जो भावना अर्थात् निर्मल दशा, वह एकदेश शुद्धनयाश्रित है, क्योंकि व्यक्तरूप पर्याय है न? व्यक्त / प्रगटरूप मोक्ष का मार्ग-सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, त्रिकाली द्रव्य के आश्रय से अनुभव में आया; अत: वह एकदेश शुद्ध है। वह **निर्विकार-स्वसंवेदनलक्षण क्षायोपशमिकज्ञानरूप होने से,...** ज्ञान की प्रधानता से कथन किया है। ऐसे तीन भाव लिये थे। यहाँ तो अकेला क्षयोपशमज्ञान लिया।

त्रिकाल जो भगवान आत्मा ज्ञायकस्वरूप, उस ओर की एकाग्रता से पर्याय में ज्ञान का जो विकास हुआ, वह क्षायोपशमिकज्ञानरूप होने से एकदेश व्यक्तिरूप है। एक अंश प्रगटरूप है, एक अंश प्रगटरूप है। चाहे तो मोक्ष प्रगट हो तो भी एक अंश प्रगटरूप है। पर्याय अंश है, खण्ड है, अंश है, भेद है। एक समय की दशा, वह क्या चीज़ है। ऐसा होने से... तो भी ध्रुव के स्वभाव के आश्रय से ऐसी निर्मल पर्याय प्रगट हुई, ध्रुव चैतन्य भगवान की अन्तर्दृष्टि, ध्येय करके... दूसरी ओर से दृष्टि को समेटकर... समझ में आया? यह भी नास्ति से कथन है। अपने चैतन्य ध्रुवज्ञायक में दृष्टि लगाना और उस ओर का ज्ञान करना और उसमें लीन होना, वह मोक्ष का मार्ग है। शुभ-अशुभभाव कहीं मोक्ष का मार्ग नहीं है। समझ में आया?

ऐसी प्रगटदशा शक्ति में से निर्मल व्यक्तता प्रगट हुई तो भी, तो पण, तथापि – तो भी कहते हैं न तुम्हारे ? यहाँ हिन्दी में तथापि है। **तथापि ध्याता पुरुष ऐसा भाता है..** परन्तु सम्यग्दृष्टि आत्मा का ध्यान करनेवाला आत्मा किसे भाता है ? त्रिकाल चीज़ को भाता है। समझ में आया ? भगवान आत्मा अनन्त-अनन्त सुख सागर का सरोवर, सुख सागर का उछलता समुद्र। सुख सागर ऐसी चीज़ जो त्रिकाली है, उसमें अन्तर में एकाग्र होकर स्वभाव को ध्येय बनाकर जो पर्याय निर्मलदशा एक अंश प्रगट हुई, परन्तु वह ध्यान करनेयोग्य नहीं। ध्यान में उसे ध्येय बनाने योग्य नहीं। नन्दकिशोरजी ! आहा ! ध्याता पुरुष-अपने शुद्धस्वरूप का ध्यान करनेवाला आत्मा। सम्यग्दर्शन ज्ञान-चारित्र, ये तीनों ध्यान हैं। क्या कहा ?

श्रोता : सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र तीनों ध्यान हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : ध्यान है। वह ध्यान जिसे प्रगट हुआ, वह ध्यानी किसे ध्याता है। समझ में आया ? आहाहा ! अनन्त सुखसागर का नीर प्रभु ! सागर का नीर होता है न, सागर का पानी होता है न !

श्रोता : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : वह नहीं, नहीं। तुम्हारे सागर की बात नहीं। यह निज सागर, अनन्त सागर नीर। समझ में आया ? ऐसा प्रभु, ध्यान करनेवाला धर्मी किसे ध्याता है ? किसे ध्येय बनाता है ? वह निमित्त को-भगवान को ध्येय नहीं बनाता – ऐसा कहते हैं। आहाहा ! दया, दान का विकल्प बीच में आवे, उसे ध्याता ध्येय नहीं बनाता। सम्यग्दृष्टि धर्मी जीव, एक समय की निर्मल मोक्षमार्ग की पर्याय जो प्रगट हुई, उसे भी ध्येय नहीं बनाता। आहाहा ! समझ में आया ? बारह अंग का निचोड़-सार यह है।

ध्याता पुरुष ऐसा भाता है – ऐसे ध्येय की भावना करता है। कैसा ध्येय ? जो आत्मा **सकलनिरावरण...** है। आहाहा ! रागादि तो उदयभाव है परन्तु शास्त्र में क्षयोपशम, क्षायिकभाव तो सावरण कहने में आया है। पण्डितजी ! क्या कहते हैं ? नियमसार में है और सावरण है, वह आवरण की अपेक्षा का अभाव हुआ न ? कितनी अपेक्षा है न ? पंचास्तिकाय में लिया है न ? चार भाव कर्मकृत। पंचास्तिकाय में लिया है। कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने मूल पाठ में लिया है कि केवलज्ञान खण्डरूप एक समय की पर्याय है, उसमें आवरण के अभाव की

अपेक्षा रह गयी तो उस केवलज्ञान को विभावज्ञान, विभावभाव कहने में आता है। आहाहा! विभाव अर्थात् विशेषभाव, भाई! विभाव अर्थात् विशेष भाव। वह सामान्य भाव नहीं। आहाहा!

कहते हैं, **सकलनिरावरण...** चार भाव को भी चार आवरणवाले कहे हैं। नियमसार में चार भाव को (आवरणवाले कहा है)। उदय, उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक चार आवरणवाले क्योंकि एक में आवरण का निमित्त है और तीन में आवरण के आंशिक अभाव का कारण है तो वह अपेक्षित भाव हो गया। इसलिए उन्हें आवरणवाला कह दिया है। भगवान आत्मा सकलनिरावरण, त्रिकाल निरावरण, जिसे आवरण है ही नहीं। आहाहा! समझ में आया? यहाँ निश्चय से आत्मतत्त्व किसे कहते हैं - यह बात चलती है। निश्चय से, सत्य से, यथार्थ से, वास्तविक रीति से ध्यान करनेवाला धर्मी जीव किसे आत्मा मानता है और किसे ध्येय बनाता है, उसकी बात चलती है। आहाहा!

सकलनिरावरण... दूसरे आवरणवाले हैं, उसमें आया, भाई! चार भाव आवरणवाले हैं - ऐसा उसमें आया न? यहाँ नहीं, उसमें (नियमसार, गाथा ४१) आया। त्रिकाल भगवान सत्व जो ज्ञानस्वभावभाव, ध्रुवभाव, अनादि-अनन्त एकरूप भाव, त्रिकाल भाव सकल निरावरण (भाव है)। चार भाव आवरणवाले हैं, वे ध्येय में लेने योग्य नहीं हैं। ओहोहो! समझ में आया?

ऊपर कहा न? एकदेश निर्मल आनन्द प्रगट हुआ। सुखानन्द, लो! तुम्हारे यहाँ सुखानन्द धर्मशाला है न? मुम्बई में नहीं? ऐई! चन्द्रकान्तभाई! जाते हो या नहीं? वहाँ सुखानन्द धर्मशाला है या नहीं? है। सुखानन्द धर्मशाला भगवान आत्मा है। सुख और आनन्द के स्वभाववाली धर्मशाला आत्मा है। ऐसा ध्रुव आत्मा का आश्रय करके, ध्येय बनाकर जो वीतरागी निर्विकल्प सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, शान्ति, आनन्द आदि जो प्रगट हुए, वे धर्मी का ध्येय नहीं तथा केवलज्ञान धर्मी का ध्येय नहीं-ऐसा यहाँ कहते हैं। आहाहा! समझ में आया?

समयसार में आता है। उपाय-उपेय का कहा था, पीछे-अन्त में उपाय-उपेय का (अधिकार आता है न?) लो, वह याद आ गया। वहाँ उपाय तो मोक्ष का मार्ग है, उपेय तो मोक्षमार्ग का फल, ऐसा सिद्धपद है। वहाँ ऐसा लिया है। समयसार, उपाय-उपेय। उपाय, मोक्ष का कारण और उपेय, मोक्षरूप दशा। उसे वहाँ ध्येय और साधन कहने में

आया है। पंचास्तिकाय में आ गया - व्यवहारसाधन-साध्य, भिन्न साध्य-साधन। भिन्न साध्य-साधन कहो तो भी निर्मल वीतरागी पर्याय साधन और पूर्ण वीतरागी दशा पूर्ण मोक्ष, वह साध्य। आहाहा! समझ में आया?

यहाँ तो कहते हैं कि साध्य वह नहीं। दूसरे अर्थ में है। वह तो प्रगट करने की अपेक्षा से वहाँ साध्य कहा गया है परन्तु प्रगट किसके आश्रय से होता है? आहाहा! ध्याता पुरुष सकल निरावरण भगवान आत्मा। ध्रुव निरावरण पिण्ड चैतन्यबिम्ब, परमसुख सागर का समुद्र है, उसमें बिलकुल आवरण और आवरण के अभाव की अपेक्षा ध्रुव में नहीं है। **अखण्ड...** देखो! केवलज्ञानादि पर्याय भी खण्ड है-अंश है। प्रवचनसार में पर्याय अंश है - ऐसा आता है न? पर्याय अंश है.. पर्याय अंश है, अंशी नहीं। आहाहा! समझ में आया? यहाँ तो अभी.. समकित.. भगवान की प्रतिमा से, सम्मेदशिखर की यात्रा करने से समकित होगा (- ऐसा मानते हैं)। कहते हैं कि समकित का ध्येय तो धर्मी को पूर्णानन्द प्रभु वह ध्येय है। वहाँ से समकित प्राप्त होता है। सेठ!

कहते हैं कि अखण्ड है। भगवान आत्मा नित्यानन्द प्रभु, महा अस्तिरूप स्वभाव, निश्चय-वास्तविक यथार्थ आत्मा जो ध्रुव है, वह अखण्ड है, उसमें खण्ड है नहीं। आहाहा! वह धर्मी का ध्येय है, समकिती ज्ञानी का वह ध्येय है। आहाहा! अखण्ड के सामने खण्ड का निषेध (किया है)। यह आगे कहेंगे। **एक..** अखण्ड में अभेद आ गया। समझ में आया? **एक..** पर्याय तो अनेक है। वस्तुरूप से भगवान ध्रुव एक है। समझ में आया? तुम्हारे में क्या कहते हैं? खेलने का आता है न? ताश का इक्का, हुकम का इक्का, हुकम का इक्का हो, वह जीत जाता है - ऐसा आता है न? हम तो.. गल्ला, रानी, बादशाह, इक्का, उसमें आता है न?

मुमुक्षु : यह तो हुकम का इक्का है।

पूज्य गुरुदेवश्री : वह इक्का भी चढ़ जाये ऐसा है परन्तु हुकम का इक्का तो पूरा। बादशाह से भी इक्का ऊँचा होता है, उसमें आता है न? हम मामा के घर में छोटी उम्र में सब खेलते थे। सब थोड़ा-थोड़ा किया है। मामा थे न, वहाँ यह रखते। गृहस्थ थे, सब रखते और खेलते, इक्का, दुक्की, छोटी उम्र की बात है, हों! आहाहा! यहाँ तो कहते हैं,

गुलाम, वह पर्याय गुलाम है। आहाहा! यह भगवान आत्मा बादशाह और इक्का है। एक भगवान पूर्ण स्वरूप एक जिसे दृष्टि में आया है, वह उसका ध्यान करता है - ऐसा कहते हैं। समझ में आया? सकल निरावरण कहकर आवरणवाले चार पर्याय का निषेध किया। अखण्ड कहकर एक अंश पर्याय का निषेध किया। एक कहकर अनेक पर्याय का निषेध किया। निषेध किया नहीं परन्तु उसमें आ गया।

प्रत्यक्षप्रतिभासमय... आहाहा! भगवान आत्मा कैसा है? एक समय की पर्याय-अवस्थारहित चीज़ प्रत्यक्ष प्रतिभास है, वह स्वरूपप्रत्यक्ष ही वस्तु है। नियमसार में, स्वरूपप्रत्यक्ष - ऐसा शब्द लिया है। ध्रुव, वह स्वरूप प्रत्यक्ष है। समझ में आया? परन्तु किसे? जिसने मति और श्रुतज्ञान की पर्याय से अपने द्रव्य को प्रत्यक्ष कर लिया है - ऐसे समकिती को ध्येयरूप से प्रत्यक्ष प्रतिभासमय द्रव्य है। गजब बात यह!

मुमुक्षु : सबके लिये नहीं?

पूज्य गुरुदेवश्री : सबके लिये नहीं। सबके लिये कहाँ? इसलिए तो यह बात चलती है उसकी कहाँ बात है? जिसे सम्यक् ख्याल में ही यह चीज़ आयी नहीं कि प्रत्यक्षप्रतिभास यह चीज़ है - ऐसा दृष्टि में आये बिना (ध्यान किसका करे?) समझ में आया? ध्याता, ध्यान करता है तो ध्याता को उस चीज़ का ख्याल है कि यह चीज़ प्रत्यक्ष प्रतिभासमय है शोभालालजी! थोड़ा सूक्ष्म है, हों! परन्तु सुने तो सही..!

मुमुक्षु : सुनना तो पड़ेगा।

पूज्य गुरुदेवश्री : सुनना पड़ेगा। इतनी थोड़ी दरकार कम है उसको (सेठ को)। यह समझे बिना तीन काल में कहीं उद्धार नहीं है। लाख यात्रा करे, भक्ति करे, पूजा करे, दया करे, दान करे, ये सब शुभभाव हैं और वहाँ दृष्टि है तो मिथ्यात्वभाव है। समझ में आया? आहाहा!

यहाँ कहते हैं **प्रत्यक्षप्रतिभासमय...** इसका अर्थ यह हुआ कि पर्याय में, वर्तमान दशा में समकिती को मति-श्रुतज्ञान के द्वारा आत्मा प्रत्यक्ष हुआ है, उसे यह प्रत्यक्षप्रतिभा -समय है - ऐसा ध्येय करता है। आहाहा! गजब बात भाई! समझ में आया? यह बारहवें दिन भागवत कथा पूरी होती है।

मुमुक्षु : भागवत् कथा है ?

पूज्य गुरुदेवश्री : आत्म भागवत् नियमसार में आता है न! भागवत् शास्त्र! नियमसार की टीका में है। पद्मप्रभमलधारिदेव ने (कहा है)। यह भागवत शास्त्र है। भगवान का कहा हुआ भागवत। समझ में आया ?

कहते हैं कि भगवान आत्मा.. आहाहा! **प्रत्यक्षप्रतिभासमय...** भाषा तो ऐसी है कि जानी हुई चीज़ त्रिकाली दृष्टि में आ गयी है। प्रत्यक्षप्रतिभासमय है न ? क्या कहते हैं ? अन्तर जो ध्रुवचीज़ है, उसकी निर्मल पर्याय वह ध्रुव.. ध्रुव.. ध्रुव.. वह ध्रुव, ध्रुव में लक्ष्य में गया है। ऐसा कहते हैं। **प्रत्यक्षप्रतिभासमय..** प्रत्यक्ष का भास ध्रुव में होता है, भाई! आहाहा! वस्तु जो प्रत्यक्षप्रतिभासमय है, प्रतिभास अर्थात जो ध्रुव है, ऐसे भाव में ध्रुवभाव में ध्रुव का प्रतिभास आ गया। ऐई! यह टीका..

प्रत्यक्षप्रतिभासमय... यह वस्तु वस्तु में प्रत्यक्षप्रतिभासमय वस्तु ध्रुव है। उसे मतिज्ञान और श्रुतज्ञानी जीव, चाहे तो आठ वर्ष की बालिका हो.. समझ में आया ? परन्तु सम्यग्दृष्टि हो तो उस सम्यग्दृष्टि का ध्येय प्रत्यक्षप्रतिभासमय द्रव्य पर दृष्टि है। आहाहा! मानो कि वस्तु प्रत्यक्ष ही है – ऐसी पड़ी है। प्रत्यक्ष है – ऐसी चीज़ पड़ी है। समझ में आया ? इसी प्रकार मति-श्रुतज्ञान में यह ध्रुव वस्तु प्रत्यक्ष पड़ी है – ऐसा दृष्टि में आया, प्रत्यक्षप्रतिभास को ध्येय बनाया। परोक्षज्ञान का ध्येय नहीं, यह प्रत्यक्ष केवलज्ञान का भी ध्येय नहीं। आहाहा! समझ में आया ?

मुमुक्षु : परोक्ष ज्ञान का तो ध्येय नहीं, प्रत्यक्ष केवलज्ञान का भी ध्येय नहीं।

पूज्य गुरुदेवश्री : वह ध्येय नहीं। ध्रुव में ध्रुव का प्रतिभास हो गया – ऐसी चीज़ है। ऐसा कहते हैं। क्योंकि ज्ञान में मति और श्रुतज्ञान में.. क्योंकि उसमें प्रत्यक्ष नाम का त्रिकाल गुण है, प्रकाश नाम का। आत्मा में प्रकाश नाम का गुण त्रिकाल है, वह सैंतालीस शक्ति में आता है। बारहवीं शक्ति प्रकाशशक्ति। उस गुण का कार्य क्या ? कि गुण ही प्रत्यक्षप्रतिभासमय है।

आहाहा! ए..! भाई! सीखने योग्य तो यह है। शिविर अर्थात् क्या ? सबेरे पूछा था। फिर हिम्मतभाई ने कहा – छावणी, एकत्रित होते है वह। फिर कहा – शिविर अर्थात् क्या

कहलाता होगा, अपने को कुछ पता नहीं। ऐई! पण्डितजी! शिविर को क्या कहते हैं? शिक्षण शिविर!

मुमुक्षु : शिक्षण शिविर में दिया जाता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु शिविर का अर्थ क्या?

मुमुक्षु : आप कहो महाराज!

पूज्य गुरुदेवश्री : यहाँ कहाँ इस शब्द के अर्थ की खबर है? यह तो हमारे पण्डितजी जानें।

मुमुक्षु : (पण्डितजी) - शिविर में शिक्षण का मुकाम, कैम्प

पूज्य गुरुदेवश्री : ...शिविर का कैम्प। शिविर का कैम्प यहाँ हुआ है।

मुमुक्षु : शिविर कैम्प में आत्मा की भागवत कथा चलती है..

पूज्य गुरुदेवश्री : यह वस्तु है। सच्ची भागवत.. आहाहा! देखो! बात ऐसी भी चली कि पर्याय है, परिणमन है परन्तु वह पर्याय ध्यान किसका करती है? ध्रुव का। ध्रुव, ध्रुव का ध्यान क्या करे? अभी तो कोई पर्याय है ऐसा माना नहीं, ध्रुव क्या है? उसका पता नहीं। उसे तो यह होता ही नहीं। पर्याय में, अवस्था में ध्रुव प्रतिभासमय प्रत्यक्ष जो चीज़ है - ऐसा ज्ञान में आया। वह चीज़ प्रत्यक्ष ही है। परन्तु इस पर्याय में प्रत्यक्ष हुई, प्रत्यक्ष वस्तु ही ऐसी है। समझ में आया? प्रकाश नाम का गुण है। स्वसंवेदन प्रकाश। आहाहा! सन्तों की कला और रीति, कथनपद्धति अलौकिक है।

मुमुक्षु : ध्रुव में ध्रुव का भास हुआ न।

पूज्य गुरुदेवश्री : ध्रुव में ध्रुव का भास हुआ। उस प्रत्यक्ष में भास हुआ तो ध्रुव में ध्रुव का भास है - ऐसा माना। आहाहा! क्या कहा? समझ में आया?

मुमुक्षु : बराबर नहीं आया।

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं आया? थोड़ा कठिन तो है।

मुमुक्षु : पर्याय में ध्रुव का भास हुआ या ध्रुव में ध्रुव का भास हुआ।

पूज्य गुरुदेवश्री : पर्याय में भास हुआ, उसकी यहाँ बात नहीं है। वस्तु प्रत्यक्ष

भासमय ध्रुव चीज़ ऐसी है। प्रत्यक्षप्रतिभासमय द्रव्य है – ऐसा लेना है न? यह द्रव्य निजात्म, निज परमात्मद्रव्य के सब विशेषण चलते हैं। आहाहा! भगवान निजपरमात्मा, देखो! परमात्मद्रव्य निज परमात्मा। त्रिकाल परमस्वरूप भगवान ध्रुव नित्यानन्दनाथ–वह कैसा है? प्रत्यक्षप्रतिभासमय है, वह वस्तु ऐसी है। आहाहा!

मुमुक्षु : प्रतिभास है, वह बाहर में आता है न!

पूज्य गुरुदेवश्री : बाहर में.. जैसे अपनी पर्याय में एक चीज़ प्रत्यक्ष होती है न? ऐसे ध्रुव में वह चीज़ प्रत्यक्ष ही है। ज्ञान प्रतिभासमय है। ज्ञान में दूसरी चीज़ प्रतिभासित होती है। प्रति पर भासती है। समझ में आया? ज्ञान की पर्याय में। तो यह ध्रुव है, वह प्रतिभासमय त्रिकाल है। यह वस्तु सम्यग्दृष्टि का विषय है। समझ में आया? परमभाव में स्थित सम्यग्दृष्टि, वह परमभाव ऐसा है – ऐसा जानता है। आहाहा! नन्दकिशोरजी! वहाँ तुम्हारे गाँव में ऐसा व्याख्यान–ब्याख्यान नहीं चलता कभी। वहाँ चलता है? कहाँ गये राजनकुमारजी! वहाँ तो ऐसी बात चलती नहीं। कोई एकाध आया हो, बस! शिक्षण शिविर में चले। आहाहा!

मुमुक्षु : यह नहीं चलती।

पूज्य गुरुदेवश्री : शहर में एकाध दिन जाए तो कहे यह क्या लगायी है, महाराज ने यह क्या लगायी है यह बात? कुछ अध्यास नहीं, पामर साधारण प्राणी। हमको ये कहते हैं तू पामर नहीं। तू तो भगवान का भगवान है। आहाहा! भाई! तुझे पता नहीं। समझ में आया?

अनन्त सिद्ध परमात्मा और संख्यात अरिहन्त, तीर्थंकर वे तो तेरी एक ज्ञान की पर्याय में समा जाते हैं। समझ में आया? ऐसी अनन्त पर्याय का पिण्ड ध्रुव है, वह तेरे भगवान का भगवान तू है। आहाहा! प्रकाशदासजी! यह साहेब की व्याख्या चलती है। आहाहा! क्या हो? ... आहाहा!

भाई! साहेब तो यह है। जो भगवान अन्दर प्रत्यक्ष प्रतिभासमय है अर्थात् ज्ञान प्रत्यक्ष.. यह तो नियमसार में आता है न? कि कारणसमयसार को जाननेवाला ज्ञान त्रिकाल उसमें पड़ा है, यह आता है या नहीं? कारणसमयसार जो है, उसे जानने का ज्ञान भी उसमें त्रिकाल पड़ा है, वह कारणसमयसार को जानता है। ऐसे ध्रुव में दो भेद पाड़ दिये हैं। है?

कारणसमयसार.. आहाहा! भगवान कारण अर्थात् यहाँ जो परमार्थ द्रव्य कहते हैं, वह कारणसमयसार। उसे क्या कहते हैं! कारणसमयसार में एक ऐसा ज्ञान है कि जो अपने को पूर्ण जानता है। ध्रुव, हों! आहाहा! समझ में आया? ...नियमसार में भी कहाँ हो यह कुछ (याद नहीं होता)। यह तो हिन्दी है। मैंने तो गुजराती पड़ा हो। वह है।

उपयोग की बात चलती होगी। उसमें उपयोग की व्याख्या में होगा न? यहाँ है, यह रहा। यह कारणज्ञान की व्याख्या है। ११-१२ गाथा। यह तो नया है न? क्या कहते हैं? कारण ज्ञान, त्रिकाली ज्ञान, ध्रुव ज्ञान। कैसा है **कारणज्ञान भी वैसा ही है। काहे से? निजपरमात्मा में विद्यमान सहज दर्शन...** त्रिकाली दर्शन, त्रिकाली चारित्र, देखो! आत्मा में त्रिकाली चारित्र पड़ा है। समझ में आया? और **सहजसुख और सहज परमचितशक्तिरूप निजकारणसमयसार के स्वरूपों को युगपद जानने में समर्थ होने से वैसा ही है।** आहाहा! देखो! यह बात थोड़ी सूक्ष्म है। त्रिकाल जो ध्रुवज्ञान है, वह अपने ज्ञान को जानता है - ऐसा त्रिकाल पड़ा है। त्रिकाल ध्रुव को जानता है - ऐसा ज्ञान है।

मुमुक्षु : सच्ची रीति से जाने...

पूज्य गुरुदेवश्री : सच्ची रीति से जानने का स्वभाव पड़ा है न? पर्यायरूप से जाना, तब स्वरूप त्रिकाल जाननेवाला है - ऐसा निर्णय हुआ। समझे न? नियमसार की १०-१२ गाथा है। सहजज्ञान... **निजकारणसमयसार के स्वरूपों को युगपद जानने में समर्थ होने से...** क्या कहा?

कहते हैं कि ध्रुव-ध्रुव कारणपरमात्मा अथवा यहाँ जो निजपरमात्मा निजद्रव्य (कहा वह), उसमें ज्ञान है, दर्शन है। कैसा? कि जो ज्ञान अपने को त्रिकाल जाने, युगपत जाने - ऐसा ज्ञान अन्दर पड़ा है। ध्रुव, ध्रुव को जाने - ऐसा ज्ञान पड़ा है - ऐसा कहते हैं। गजब बात है। समझ में आया? सहजकारणज्ञान भी परमात्मा को, निजपरमात्मा को। देखो! यहाँ अपने आता है न? निज परमात्मद्रव्य, उसके ये सब लक्षण हैं। निजपरमात्मद्रव्य। उस निजपरमात्मा में विद्यमान। कौन विद्यमान? **सहजदर्शन, सहजचारित्र, सहजसुख और सहजपरमचित्शक्तिरूप निज कारणसमयसार के स्वरूपों को युगपद् जानने में समर्थ होने से...** यहाँ पर्याय की बात नहीं है। आहाहा! पर्याय की बात नहीं। यह तो ध्रुव का ऐसा लक्षण है।

मुमुक्षु : ध्रुव में ऐसी शक्ति पड़ी है।

पूज्य गुरुदेवश्री : स्वयं को त्रिकाल युगपद् जाने – ऐसा ही स्वभाव ही है। आहाहा!

मुमुक्षु : पर्याय प्रगट होती है।

पूज्य गुरुदेवश्री : वह तो प्रगट पर्याय है। समझ में आया ? त्रिकाल ज्ञान ध्रुव है, वह ध्रुव को बराबर जानता है – ऐसा कहते हैं। ऐसा वह पड़ा है। आहाहा! ब्रह्म उपदेश, आता है न भाई! ...उसमें ही यह है। देखो... ११-१२ पूरी होती है न ? फिर तेरहवीं गाथा। बारहवीं गाथा में यह ब्रह्म उपदेश किया – ऐसा कहते हैं। **इस प्रकार संसाररूपी लता का नूर छेदने को कुठाररूप...** है। हथियार को क्या कहते हैं ? कुठार।

परमपारिणामिक स्वभाव संसार को छेदने के लिये कुठार के समान है, उसका अर्थ कि छेदनेवाली पर्याय नहीं। संसार छेदनस्वरूप ही उसका है। समझ में आया ? भगवान ध्रुवज्ञायकभाव, जिसे यहाँ निष्क्रिय कहा था, निष्क्रिय कहा था, जिसमें परिणमन नहीं, मोक्षमार्ग नहीं, जिसमें मोक्ष नहीं – ऐसा ध्रुवस्वरूप, कहते हैं, वह अपने में अपने को त्रिकाल जाने – ऐसा इसमें स्वभाव पड़ा ही है। अपने को-ध्रुव को ध्रुव जाने – ऐसा स्वभाव त्रिकाल पड़ा है। समझ में आया ?

मुमुक्षु : कर्म हल्के हों तब जाने।

पूज्य गुरुदेवश्री : कर्म-फर्म की यहाँ बात ही नहीं। कर्म उसके घर में (रहे), वे तो परद्रव्य हैं। वे स्वद्रव्य में कहाँ आये हैं ? आहाहा! पर्याय की बात नहीं, वहाँ फिर कर्म की बात तो कहीं रह गयी। आहाहा! भगवान आत्मा... देखो, कहते हैं न **अनाथ मुक्तिसुन्दरी का नाथ** – उसकी भावना करनी चाहिए। वह त्रिकाल भगवान मुक्तिसुन्दरी का नाथ! आहाहा! उसका अनुभव करना चाहिए। नियमसार में बहुत सरस परमपारिणामिकभाव का बहुत वर्णन किया है, बहुत।

यहाँ कहते हैं **प्रत्यक्षप्रतिभासमय...** ओहो! लो, अभी तो उसी-उसी में बहुत बाकी है।

मुमुक्षु : माल निकले न!

पूज्य गुरुदेवश्री : उसमें है या नहीं ? यहाँ कहते हैं निजपरमात्मा त्रिकाली द्रव्य।

एक समय की वर्तमान अवस्था के पीछे जो ध्रुव चीज़ पड़ी है, उसकी बात चलती है क्योंकि धर्मी का ध्येय वह है और धर्मी को सम्यग्दर्शन प्रगट हुआ, वह द्रव्य की दृष्टि से प्रगट हुआ है। समझ में आया? आहाहा! **प्रत्यक्षप्रतिभासमय...** किसे प्रतिभास हुआ? यह द्रव्य प्रत्यक्ष प्रतिभासमय है, स्वरूपप्रत्यक्ष ही है। वस्तु, वस्तुरूप से अन्दर स्वरूपप्रत्यक्ष है। ऐसे मति और श्रुतज्ञान द्वारा प्रत्यक्ष होकर आत्मा का अनुभव हुआ तो कहते हैं कि प्रत्यक्षप्रतिभासमय ध्रुव है, वह मेरा ध्येय है। आहा! भारी कठिन काम, जगत को...। विपिनभाई! ऐसा सुनने को मिला नहीं।

अकेला भगवान, जिसके ज्ञान की पर्याय में ध्येयरूप से ध्रुव भगवान है। कहते हैं कि वह तो प्रत्यक्षप्रतिभासमय वस्तु ही है। अनादि-अनन्त प्रत्यक्ष प्रतिभास वस्तु ही ऐसी है। आहाहा!

अविनश्वर... है। ठीक! प्रत्यक्ष के अतिरिक्त का परोक्षपना, उसका निषेध किया। समझ में आया? अथवा एक समय की पर्याय जो केवलज्ञान की प्रत्यक्ष पर्याय है, उसका भी निषेध हो गया। आहाहा! **अविनश्वर है...** भगवान ध्रुवस्वरूप त्रिकाल अविनश्वर है। पर्याय तो नाशवान है। केवलज्ञान की पर्याय भी नाशवान है। यह बात! यहाँ तो केवलज्ञान की पर्याय, वह एक समय रहती है, दूसरे समय में उसका नाश होता है। पर्याय है न उत्पादव्ययध्रुवयुक्तं सत्। केवलज्ञान उत्पन्न हुआ, दूसरे समय उस पर्याय का नाश होता है, दूसरे समय दूसरा केवलज्ञान उत्पन्न होता है। ओहोहो!

केवलज्ञान नाशवान है। सदृश रहता है, इस अपेक्षा से कूटस्थ कहा है। यहाँ तो त्रिकाल की अपेक्षा से तो उसे नाशवान कहा है। समझ में आया? ऐसी की ऐसी केवलज्ञान की पर्याय प्रगट हुई, ऐसी की ऐसी सदृशरूप रहती है। पर्याय वह की वह नहीं, परन्तु वैसी की वैसी, वैसी की वैसी रहती है, इस अपेक्षा से कूटस्थ कहा है। है तो नाशवान। एक भगवान ध्रुवस्वरूप अविनाशी है। आहाहा! यहाँ तो अभी शरीर और पर नाशवान है, यह अन्दर बैठता नहीं। आहाहा! यह नाशवान पदार्थ है - ऐसा बैठता नहीं। राग नाशवान है, यह इसे बैठता नहीं। पर्याय नाशवान कैसे बैठे? आहाहा! बैठाकर बैठावे। भगवान स्वयं बैठावे तो बैठे। समझ में आया? निश्चय गुरु तो यह आत्मा है। निश्चय देव

और निश्चय.. तीर्थ एक ध्रुव आत्मा है। इस तीर्थ में स्नान करो ऐसा कहते हैं। समझ में आया? आहाहा! गजब मार्ग, भाई!

अविनश्वर... कभी नाश नहीं होता। उसमें पलटना नहीं होता – ऐसा कहते हैं। ध्रुव में पलटना कैसा? परिणमन कैसा? परिणमन है, वह तो नाशवान है। आहाहा! समझ में आया? शुद्ध पारिणामिक परमभावलक्षण। दूसरे में परमपारिणामिकभाव ऐसा शब्द आता है, भाई! परमपारिणामिक। यहाँ शुद्ध पर जोर देकर त्रिकाल शुद्ध वह परिणम.. भव्य-अभव्य जीव। शुद्धपारिणामिक सहजभाव, परमभाव। केवलज्ञानादि भी अपरमभाव है। समझ में आया? आहाहा!

नियमसार की ५० वीं गाथा में कहा न! क्षायिक समकित भी परस्वभाव है, परस्वभाव है, परद्रव्य है, परस्वभाव है। गजब बात है! ५० वीं गाथा में लिया, भगवान! तेरा स्वभाव तो त्रिकाल, वह तेरा स्वभाव है। आहाहा! एक समय की क्षायिक समकित की पर्याय, परस्वभाव है। नियमसार में है, इसमें नहीं। नियमसार ५० गाथा है न? परस्वभाव, हों! परभाव नहीं।

यहाँ तो पहले परस्वभाव। पूर्वोक्तस्वभाव परस्वभाव है। वे चार भाव परस्वभाव है। क्षायिक समकित परस्वभाव है। आहाहा! यह तो कोई दिगम्बर सन्त! कहते हैं कि चारित्र -पर्याय परस्वभाव है। सम्यग्दर्शनपूर्वक अनुभव में वीतरागी चारित्रपर्याय प्रगट हुई, वह भी परस्वभाव है।

मुमुक्षु : किसकी अपेक्षा से?

पूज्य गुरुदेवश्री : त्रिकाल की अपेक्षा से। राग की अपेक्षा से तो स्वभाव है परन्तु त्रिकाल की अपेक्षा से परस्वभाव है और परद्रव्यं-उसे परद्रव्य कहा। आहाहा! त्रिकाली ज्ञायकभगवान, वह स्वद्रव्य और निर्मल पर्याय, मोक्ष का मार्ग, वह पर्याय परद्रव्य है। परस्वभाव और परद्रव्य। आहाहा! और हेय। तीन बोल लिये। **शुद्धान्तस्तत्त्वस्वरूपं स्वद्रव्यमुपादेयम्।** भगवान आत्मा... देखो! सहज.. बहुत ऊँचा कहा **शुद्ध-अन्तस्तत्त्व-स्वरूप इस स्वद्रव्य का आधार सहजपरमपारिणामिकभावलक्षण (-सहज परम -पारिणामिकभाव जिसका लक्षण है ऐसा) कारणसमयसार है।** आहाहा! त्रिकाली

भगवान, जिसमें मोक्ष की परिणति भी नहीं—ऐसा भगवान ध्रुव, कहते हैं कि शुद्धपारिणामिकभाव और उसके अतिरिक्त धर्म की एक समय की पर्याय, सच्चे धर्म की पर्याय, हों! वह भी परस्वभाव, परद्रव्य और हेय है। वह हेय है, उपादेय नहीं। आहाहा! सेठ! कभी ऐसा सुना नहीं।

मुमुक्षु : आठ वर्ष हो गये, आपके पास पहली बार सुना।

पूज्य गुरुदेवश्री : बात सच्ची है, किसी समय नहीं था इस गाथा में? पहले पढ़ा गया है। समझ में आया? यह तो अगम्यगम्य की बातें हैं।

कहते हैं, अत:तत्त्व स्वद्रव्य जिसे यहाँ पारिणामिकभाव कहते हैं। पारिणामिकपरम -भावलक्षण। पारिणामिक, शुद्धपारिणामिक ऐसा कहा है। क्योंकि अशुद्ध पारिणामिक का निषेध करना है न! शुद्धपारिणामिकपरमभाव। दूसरा, परमभाव। केवलज्ञानादि, क्षायिक समकित आदि अपरमभाव है। परमभाव भगवान ध्रुव है। आहाहा! निजपरमात्मद्रव्य। अपना निजपरमात्मद्रव्य त्रिकाली। देखो! निज-अपना परमात्मद्रव्य, वही मैं हूँ। सम्यग्दृष्टि उसे अपना ध्येय बनाकर ऐसा जानता है और मानता है। यह मैं हूँ। समझ में आया? हमेशा निर्णय तो पर्याय करती है परन्तु पर्याय निर्णय करती है कि 'यह मैं हूँ।' समझ में आया?

निजपरमात्म.. देखो, कितने विशेषण पहले आये थे। पहले आया था न? सर्वविशुद्धपारिणामिक परमभावग्राहक शुद्ध उपादानभूत शुद्ध द्रव्यार्थिकनय से जीव कर्तत्व-भोक्तृत्व से रहित है और बन्ध-मोक्ष के कारण और परिणाम से शून्य है। दूसरे पृष्ठ पर आया है। समझ में आया? पन्ना है न? समझ में आया? जब पढ़ा जाये तब पता होता है या नहीं? तो ऐसे कैसे भूल जाते हैं? सब भूल गये। पन्ना भूल गये। समझ में आया?

मुमुक्षु : भूल से दूसरा पन्ना रखा गया।

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु भूल से कैसे रखा गया? वापस यह कोई बारम्बार नहीं आता। समझ में आया? ऐसा **निजपरमात्मद्रव्य, वही मैं हूँ',...** वही मैं हूँ। सम्यग्दृष्टि अपने को ध्येय... वही मैं हूँ-ऐसा विशेषण है।

परन्तु ऐसा नहीं भाता... नास्ति से बात करते हैं। अनेकान्त है। परन्तु सम्यग्दृष्टि ऐसी भावना नहीं करता कि '**खण्डज्ञानरूप मैं हूँ।**' मैं पर्यायरूप हूँ - ऐसी भावना नहीं

करता। समझ में आया? '**खण्डज्ञानरूप मैं हूँ।**' ऐसी भावना नहीं करता। आहाहा! साधारण पामर का-अज्ञानी का तो कलेजा काँप जाये। हाय. हाय.. ऐसा मार्ग! यह वीतराग ऐसा एकान्त कहते हैं? यह तो एकान्त है... एकान्त है.. एकान्त है.. अरे! सुन तो सही। एकान्त ही कहा जाता है न!

मुमुक्षु : सम्यक् एकान्त ही होय न!

पूज्य गुरुदेवश्री : सम्यक् एकान्त ऐसी स्वद्रव्य की दृष्टि बिना, ध्येय हुए बिना सम्यग्दर्शन कभी तीन काल में होता नहीं। आहाहा! समझ में आया? और सम्यग्दर्शन हुआ तो भी ध्येय तो वह का वही है। फिर शास्त्र में आता है या नहीं? अव्रत का त्याग करके व्रत करे, वह तो स्वरूप का अनुभव हुआ है, उसमें अव्रत के त्याग का अर्थ कि स्वरूप में स्थिरता विशेष हुई है, तब अव्रत का त्याग होकर व्रत के विकल्प की भूमिका में ऐसा आता है। वह आनन्द में स्थिर है तो व्रत कब आवे? समाधिशतक में आता है न? पूज्यपादस्वामी। इष्टोपदेश में है। अव्रत छोड़कर व्रत लेना, उसका अर्थ क्या?

मुमुक्षु : फिर तो दोनों छोड़ने योग्य हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : छोड़ने योग्य - ऐसा नहीं, वह चीज़ ही मुझमें नहीं। व्रत और अव्रत का विकल्प मुझमें है ही नहीं। मेरी पर्याय में नहीं तो द्रव्य में तो है ही नहीं। आहाहा! ऐसी दृष्टि होने के बाद अनुभव के आनन्द के स्वाद में विशेष स्थिर होकर आनन्द की विशेष दशा हुई, तब अव्रत का त्याग हुआ और तब व्रत के विकल्प की भूमिका उसे उत्पन्न होती है परन्तु आनन्द में विशेष आया है, उस भूमिका में व्रत का विकल्प उत्पन्न होता है। समझ में आया? अव्रत है तो नरकादि में जायेगा। व्रत से स्वर्ग में जायेगा। वह (व्रत) छाया है, (अव्रत) वह धूप है - ऐसा आता है न?

मुमुक्षु : वह....

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ।

मुमुक्षु : खण्डरूप...

पूज्य गुरुदेवश्री : खण्डरूप पाँच ज्ञान है न? पर्याय है, वह खण्डरूप है। पर्याय

है न पर्याय ? राग-बाग नहीं। एक समय की पर्याय वह खण्डरूप है। वह शुद्ध केवलज्ञान की पर्याय भी खण्डरूप है। भगवान त्रिकाल अखण्ड है। समझ में आया ? खण्डज्ञान भी भाता नहीं तो फिर शुभराग को भावे और निमित्त को प्राप्त करने की भावना हो, वह ज्ञानी को ऐसा होता नहीं। आहाहा! गजब बात, भाई!

मुमुक्षु : ऐसी भावना बारम्बार सम्यग्दृष्टि भाता है तो वह आत्मा को ही सम्मत करता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : उसको सम्मत करता है ध्रुव को। ध्रुव दृष्टि में आया, वही सम्मत करता है। दृष्टि वहाँ पड़ी है तो बारम्बार वहाँ ही दृष्टि जाती है।

मुमुक्षु : प्रत्येक समय..

पूज्य गुरुदेवश्री : प्रत्येक समय में है दृष्टि, परन्तु यहाँ बात करनी है न! नियमसार में गाथा आती है। कि पंचाचार निर्मल पालनेवाले मुनि पंचम गति के कारण पंचम भाव का स्मरण करते हैं - ऐसा श्लोक आता है। क्या कहा ? निर्मल सम्यग्दर्शन, ज्ञान-चारित्र-तप और वीर्य-निर्मल वीतरागी वीर्य - ऐसे पंचाचार पालनेवाले धर्मात्मा पंचमगति का कारण, पंचमभाव का स्मरण करते हैं। ऐसा पाठ है। स्मरण करते हैं, इसका अर्थ परिणति बारम्बार वहाँ ही ढली है। आहाहा! समझ में आया ? कथन तो ऐसा ही आवे न, कथन दूसरा किस प्रकार आवे ? बाकी तो समकिती के ध्येय में ध्रुव पर दृष्टि पड़ी है और परिणमन हुआ है। समझ में आया ? वह परिणमन निरन्तर चालू है। उसका नाम ध्रुव को ध्याता है - ऐसा कहने में आता है। भाषा में उपदेश तो उपदेश की पद्धति से आता है। भाषा जड़, भाव कहना अन्तर के.. समझ में आया ?

निजपरमात्मद्रव्य, 'वही मैं हूँ', परन्तु ऐसा नहीं भाता कि 'खण्डज्ञानरूप मैं हूँ।' मैं मतिज्ञान और श्रुतज्ञानरूप हूँ - ऐसी भावना ज्ञानी की नहीं होती। आहाहा! **ऐसा भावार्थ है।** लो, ऐसा भावार्थ है। सम्पूर्ण गाथा का यह भावार्थ है। **यह व्याख्यान, परस्पर सापेक्ष ऐसे आगम-अध्यात्म के..** आगम और अध्यात्म से मिलाकर यथार्थरूप कहा - ऐसा कहते हैं। आगम की भाषा क्या है और अध्यात्म की भाषा क्या है, इन दोनों को मिलाकर कहने में आया है। मोक्ष का मार्ग आगमभाषा से उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक कहा। मोक्ष

का मार्ग अध्यात्मभाषा से शुद्धात्म-अभिमुख परिणाम और शुद्धोपयोग कहा। दोनों में विरोध नहीं है। दोनों अपेक्षा लेकर बात की है। समझ में आया?

तथा नयद्वय... द्रव्यार्थिकनय और पर्यायार्थिकनय के अभिप्राय से अविरुद्धपूर्वक कहने में आया है। क्योंकि पहले कहा था कि जो चार भाव हैं, वे पर्यायरूप हैं। त्रिकाली भाव द्रव्यरूप है - ऐसे दो को मिलाकर बात की थी। पर्याय नहीं - ऐसा नहीं; पर्याय, पर्याय में है। समझ में आया? देखो! यहाँ कहते हैं। (**तथा नयद्वय के (द्रव्यार्थिक..)** त्रिकाली द्रव्य ध्रुव और वर्तमान पर्याय चार भावरूप दोनों को मिलाकर **अभिप्राय के अविरोधपूर्वक ही कहा गया है..** उसमें कोई विरोध है नहीं। आचार्य स्वयं सिद्ध करते हैं। समझ में आया? सूक्ष्म तो है, भाई!

मुमुक्षु : काम तो पर्याय से होता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, काम तो पर्याय से है परन्तु पर्याय का ध्येय कहाँ? इसकी बात है। दो बात की है कि चार भाव पर्यायरूप है, पारिणामिक ध्रुवरूप है। भावना भानेवाला ध्रुव की भावना करता है, पर्याय की भावना नहीं करता क्योंकि मोक्षमार्ग तो पर्याय है। आहाहा! **नयद्वय के (द्रव्यार्थिक-पर्यायार्थिकनय के) अभिप्राय के अविरोधपूर्वक ही कहा गया होने से सिद्ध है (निर्बाध है),..** उसमें किसी अंश में भी आगम से और अध्यात्म से विरोध नहीं है - ऐसा आचार्य स्वयं कहते हैं। **ऐसा विवेकी जानें।** आहाहा! देखो! एक शब्द में कह दिया, ऐसा विवेकी जानें। राग से पृथक् होकर ध्रुव की दृष्टि करने से विवेकी को उसकी सब खबर पड़ती है। समझ में आया? विवेकी जाने, हों! संस्कृत टीका में है। पहले से कर्ताकर्म उठाया है। आत्मा कर्ताकर्म नहीं, विकार का कर्ता और विकार का भोक्ता ध्रुव नहीं, यहाँ से उठाया था न? समझ में आया? क्या कहते हैं? विकार आया न पहले?

मुमुक्षु : फिर ऐसा आया कि जाननेवाला तो है।

पूज्य गुरुदेवश्री : वह जाननेवाला दूसरा, वह जाननेवाला दूसरे अर्थ में कहा है। अपने को जानता है, वह जाननेवाला, यह तत्त्व चलेगा अपने अब।

मुमुक्षु : वह विवेकी जाने।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ; वही विवेकी जानता है। अलौकिक मार्ग है, भाई! कर्ता-कर्म उड़ा दिया यहाँ तो जानना – ऐसा कहा। जानने का अर्थ ऐसा कि पर्याय में उसका ज्ञान होता है। उसे जाने ऐसा कहा है सहजरूप परिणमन की पर्याय में उस प्रकार का ज्ञान होता है। समझ में आया? जानो–ऐसा कहा। वहाँ क्या जानने जाता है? वह जानने की ऐसी पर्याय प्रगट होती है। राग आवे तो उसे जाने ऐसा कहना, उपशम हो तो उसे जाने ऐसा कहना, क्षयोपशम–क्षायिक हो तो उसे जाने ऐसा कहना। कहना अर्थात् उसे जाने।

मुमुक्षु : जानता नहीं और कहना।

पूज्य गुरुदेवश्री : ज्ञात नहीं – ऐसा नहीं। जानने की अपनी पर्याय में वह आया है। इतनी व्यवहार की अपेक्षा से जाने ऐसा कहने में आया है। समझ में आया? सब बात आयी। लो, बारहवाँ दिन पूरा हुआ।

यह बारहवाँ दिन है, पूरा हो गया। ऐसा कभी नहीं चला, ऐसा व्याख्यान बाहर नहीं आया, ऐसा स्पष्टीकरण पहले नहीं हुआ। आहाहा!

निष्क्रिय भगवान आत्मा अर्थात् सिद्ध की पर्याय से भी रहित भगवान आत्मा.. आहाहा! ऐसी [illegible] की जानते हैं – ऐसा कहते हैं। जिसे विवेक नहीं, वह जान नहीं सकता।

मुमुक्षु : विवेकी अर्थात् साधक?

शुद्धपारिणामिक भाव सम्बन्धी बारह अपूर्व प्रवचन द्वारा
क्षीणमोहगुणस्थान की प्राप्ति का अमोघ उपाय
दर्शानेवाले श्री सद्गुरुदेव की जय हो.. जय हो.. जय हो!

पूज्य गुरुदेवश्री : साधक, ज्ञानी, समकिती। यहाँ तो सम्यग्दृष्टि जानता है – ऐसा लेना है न? अज्ञानी को पता ही कहाँ है (कि) क्या वस्तु है? समझ में आया? अपनी दृष्टि में ध्रुव आया है, उसे शुद्ध विवेक है। उसे सबका ख्याल है कि पर्याय यह, द्रव्य यह, दूसरो को पता नहीं पड़ता। आहाहा!

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)